

Developmental Psychology

Emotional Development

Nature of Emotional Behaviour

Factors Affecting Emotionality

Psycho Social Behaviour



Poster Maker

3.2.4. विभिन्न अवस्थाओं में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Different Stages)

विभिन्न अवस्थाओं में संवेगात्मक विकास निम्नलिखित प्रकार से होता है—

- 1) शैशवावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Infancy)
- 2) बाल्यावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Childhood)
- 3) किशोरावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Adolescence)

3.2.4.1. शैशवावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Infancy)

स्पिज के शब्दों में, "संवेग बालक के जन्म के साथ पैदा नहीं होते बल्कि इनका विकास भी व्यक्तित्व के अन्य पहलुओं के साथ ही होता है।"

बुहबर के अनुसार, "प्रथम वर्ष में शिशु में भय, हंसना, रोना, स्नेह एवं आनंद जैसे संवेग देखे जा सकते हैं।" इस उम्र में बालकों में अत्यधिक संवेगात्मक अस्थिरता होती है। बालक की उम्र बढ़ने के साथ ही उसकी संवेगात्मक अभिव्यक्ति में भी परिवर्तन आता है तथा व्यवहार में निश्चितता व स्पष्टता देखी जा सकती है।

जस्टिन के अनुसार, "तीन वर्ष तक की आयु में बालकों में एक साथ खेलने के कारण सहयोग और प्रेम का विकास होता है।"

3.2.4.2. बाल्यावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Childhood)

इस अवस्था में बालक विद्यालय जाना प्रारम्भ कर देता है। घर से बाहर नवीन वातावरण में बालक के लिए संवेगात्मक समायोजन में थोड़ी कठिनाई होती है। अध्यापक को चाहिए कि वह कठोर अनुशासन की अपेक्षा बालकों में स्वतंत्र व स्वस्थ संवेगों का विकास करे। इस अवस्था में बालक भय और क्रोध पर नियन्त्रण स्थापित करने की कोशिश करता है। सामाजिक मूल्यों के अनुरूप व्यवहार करने के लिए वह अपने संवेगों का दमन कर समूह के प्रति सहभागिता का परिचय देता है।

क्रो एवं क्रो के अनुसार, "बाल्यावस्था में संवेगों में निरंतर परिवर्तन होता रहता है।" बाल्यावस्था में बालकों में 6 वर्ष की उम्र तक मुख्य आठ प्रकार के संवेगों का विकास हो जाता है—

संवेग (Emotion)	
खुशी (Joy) हँसना, तालियाँ बजाना, गाना, उछलना, कूदना	दुःख (Sorrow) रोना, खेलने तथा अपने प्रिय क्रिया कलापों को करने से मना करना
क्रोध (Anger) रोना, चीखना, चिल्लाना वस्तुओं को फेंकना, पैर पटकना	डर (Fear) भागना, छिपना, चिल्लाना
उत्सुकता (Curiosity) प्रश्न करना, क्यों? क्या? कैसे? कहाँ?	ईर्ष्या (Jealousy) माता-पिता द्वारा अपने दूसरे भाई-बहन के प्यार किए जाने का विरोध करना
जलन (Envy) दूसरे बालक के पास अपने से अच्छी वस्तु को देखकर अपनी वस्तु की शिकायत करना	अनुराग (Affection) उन सभी वस्तुओं तथा व्यक्तियों के प्रति अनुराग प्रदर्शित करना जो उन्हें पसन्द है

बाल्यावस्था के अंतिम चरण में अर्थात् 12 वर्ष की अवस्था तक संवेगों में परिपक्वता आ जाती है तथा संवेगों की अभिव्यक्ति करना एवं संवेगों को नियंत्रित करना सीख लेते हैं। घर से बाहर का वातावरण जैसे समाज या विद्यालय एवं घरेलू वातावरण में परिवर्तन के फलस्वरूप सांवेगिक असन्तुलन (Emotional Imbalance) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। ऐसी स्थिति में बालक के संवेगों में तीव्रता आ जाती है जैसे, विद्यालय में समायोजन न कर पाने की स्थिति में, बीमार रहने की स्थिति में चिड़चिड़ापन, क्रोध आदि संवेग तीव्र हो जाते हैं।

3.2.4.3. किशोरावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Adolescence)

किशोरावस्था मानसिक शक्तियों के विकास का समय है। इस उम्र में संवेग अकस्मात् प्रकट होते हैं तथा परिस्थिति के अनुसार बदलते रहते हैं। **हालिंगवर्थ के अनुसार**, "प्रौढ़ावस्था की अपेक्षा किशोरावस्था में संवेगात्मक व्यवहार अधिक उग्रता लिए होता है।" इस अवस्था में विभिन्न प्रकार के भावों के विकास के साथ-साथ बालक में कल्पना शक्ति का भी विकास होता है। इस अवस्था में संवेगों पर नियन्त्रण करना बहुत ही कठिन कार्य होता है। इस उम्र में बालकों में लिंग-भेद एवं यौन सम्बन्धी परिवर्तन देखे जाते हैं।

अमेरिकी मनोवैज्ञानिक जी.एस. हॉल (G.S. Hall) ने किशोरावस्था को "तनाव एवं तूफान" (Stress and Storm) की अवस्था कहा है। इस अवस्था में संवेग का विकास चरम सीमा पर होता है। किशोर/किशोरियों में संवेदनशीलता अधिक होती है। अनुचित व्यवहार एवं उनके मनपसन्द कार्य न होने की स्थिति में उनके आत्मसम्मान पर उन्हें आघात प्रतीत होता है और ऐसी स्थिति में उसका प्रतिकार करने के लिए वे अलग ढंग अपनाते हैं। संवेगों पर नियन्त्रण करना सीख लेते हैं परन्तु उसकी अभिव्यक्ति का दूसरा तरीका अपनाते हैं। जो भी व्यक्ति या परिस्थिति उनके क्रोध या तनाव का कारण होता है उसकी आलोचना द्वारा तथा उस पर मूक रहकर विरोध करते हैं। किशोरावस्था के प्रारम्भिक चरण में संवेगों में तीव्रता होती है तथा संवेग पर नियन्त्रण कम होता है। किशोरावस्था के अन्तिम चरण 19-20 की आयु तक पहुँचते-पहुँचते संवेगों की तीव्रता में कमी आ जाती है तथा संवेगों पर नियन्त्रण अधिक हो जाता है।

3.2.5. संवेगात्मकता/भावात्मकता को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting Emotionality)

संवेगात्मक विकास का स्थान बालक के विकास की प्रत्येक अवस्था में अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। बालक का संवेगात्मक विकास जन्म के कुछ समय के पश्चात् ही प्रारम्भ हो जाता है। बालक के संवेगात्मक विकास अनेक कारकों पर निर्भर करता है। उन कारकों में से कुछ कारक निम्नलिखित हैं—

- 1) **विद्यालय वातावरण (School Environment)**—बालक के संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों में विद्यालय वातावरण का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। विद्यालय का अच्छा वातावरण, पाठ्यक्रम और कार्यक्रम बालक के संवेगों को संतुष्ट कर उसे आनन्द की अनुभूति प्रदान करता है। उपयुक्त विद्यालयी वातावरण में बालक का संवेगात्मक विकास अत्यन्त प्रभावी ढंग से हो पाता है। विद्यालय स्तर पर होने वाली पाठ्य सहगामी क्रियाओं के माध्यम से बालक के संवेगात्मक विकास को एक दिशा प्रदान की जाती है जो बालक के लिए हितकर होती है। बालक का संवेगात्मक विकास मुख्याध्यापक, अध्यापक एवं विद्यार्थियों के बर्ताव पर भी निर्भर करता है।

- 2) **परिवार तथा आस-पड़ोस का वातावरण (Family and Neighbourhood Environment)**—बालक के संवेगात्मक विकास पर बालक के परिवार, पारिवारिक सदस्यों एवं आस-पड़ोस के वातावरण का प्रभाव पड़ता है। बालक के सन्तुलित संवेगात्मक विकास के लिए यह आवश्यक है कि बालक के परिवार एवं आस-पड़ोस का वातावरण आनन्दमय, शान्तिपूर्ण और सुरक्षायुक्त हो। बालक के परिवार एवं आस-पड़ोस का वातावरण जैसा होगा बालक का व्यवहार भी वैसा ही होगा। परिवार के सदस्यों का नकारात्मक दृष्टिकोण बालक के संवेगात्मक विकास को असन्तुलित कर देता है।
- 3) **स्वास्थ्य और शारीरिक विकास (Health and Physical Development)**—बालक के स्वास्थ्य का उसके संवेगात्मक विकास पर अत्यन्त गहरा प्रभाव पड़ता है साथ ही साथ बालक का शारीरिक विकास भी बालक के संवेगात्मक विकास को प्रभावित करता है। बालक के शारीरिक विकास एवं स्वास्थ्य का उसके संवेगात्मक विकास से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। शारीरिक रूप से अविकसित एवं अस्वस्थ बालकों में स्वस्थ एवं शारीरिक रूप से विकसित बालकों की तुलना में अधिक अस्थिरता होती है। बालकों के सामान्य संवेगात्मक विकास के लिए यह आवश्यक है कि उनका शारीरिक विकास एवं स्वास्थ्य सामान्य हो।
- 4) **थकान (Fatigue)**—संवेगात्मक विकास पर थकान का भी स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। थकावट के कारण से अक्सर बालक चिड़चिड़ाते लगता है, बालक को शीघ्र क्रोध आने लगता है। जिसका परिणाम यह होता है कि बालक में अवांछनीय संवेगात्मक विचार एवं व्यवहार उत्पन्न होने लगते हैं।

क्रो एवं क्रो के अनुसार, "जब बालक थका हुआ होता है तब उसमें क्रोध या चिड़चिड़ेपन के समान अवांछनीय संवेगात्मक की प्रवृत्ति होती है।"
- 5) **बुद्धि तथा मानसिक योग्यता (Intelligence and Mental Aptitude)**—बालक का संवेगात्मक विकास उसकी बुद्धि एवं मानसिक योग्यता पर भी निर्भर करता है। संवेगों के विकास एवं बुद्धि के मध्य में सहसम्बन्ध पाया जाता है। संवेगात्मक कुण्ठा एवं कष्ट बौद्धिक विकास में बाधा उत्पन्न करती है। संवेगात्मक रूप से स्थिर बालक अपने मन को पढ़ाई में लगाते हैं। बौद्धिक रूप से दक्ष बालक अपने आप को संवेगात्मक रूप से स्थिर बनाए रखता है।
- 6) **सामाजिक स्थिति (Social Status)**—बालक को संवेगात्मक रूप से प्रभावित करने का एक अन्य कारक बालक की सामाजिक स्थिति है। क्रो एवं क्रो के अनुसार, "निम्न सामाजिक स्थिति के बालकों में उच्च सामाजिक स्थिति के बालकों की अपेक्षा अधिक असन्तुलन और अधिक संवेगात्मक अस्थिरता होती है।"
- 7) **आर्थिक स्थिति (Financial Status)**—बालक के संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों में से एक कारक परिवार की आर्थिक स्थिति भी है। सामान्यतः धनाढ्य परिवार के बालक और निर्धन परिवार के बालकों के संवेगात्मक व्यवहार में भिन्नता पाई जाती है। अनेक ऐसे कारण हैं जिनकी वजह से उनमें ईर्ष्या-द्वेष की भावना उत्पन्न हो जाती है।
- 8) **अभिभावकों का दृष्टिकोण (Attitude of Parents)**—संवेगात्मक विकास पर अभिभावकों के दृष्टिकोण का भी बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। क्रो एवं क्रो के अनुसार, "बच्चों की उपेक्षा करना, बहुत कम समय तक घर के बाहर रहना, बच्चों के बारे में आवश्यकता से अधिक चिन्तित रहना, बच्चों के सामने उनके रोगों के बारे में बातचीत करना, बच्चों की आवश्यकता से अधिक रक्षा करना, बच्चों को अपनी इच्छा

3.3. एरिक एरिकसन का मनो-सामाजिक विकास का सिद्धान्त (ERIK ERIKSON'S THEORY OF PSYCHO-SOCIAL DEVELOPMENT)

3.3.1. परिचय (Introduction)

मनोविज्ञान में व्यक्तित्व के सिद्धान्तों में सबसे महत्वपूर्ण एवं सुप्रसिद्ध सिद्धान्त इरिकसन का 'मनोसामाजिक विकास' सिद्धान्त को माना जाता है। सिगमण्ड फ्रायड की तरह ही इरिकसन का भी मानना है कि व्यक्तित्व का विकास क्रमिक अवस्थाओं में होता है और फ्रायड की तरह ही इरिकसन भी व्यक्तित्व के विकास में सामाजिक कारकों को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं। फ्रायड के मनोलैंगिक अवस्थाओं के सिद्धान्त के विपरीत इरिकसन का सिद्धान्त सम्पूर्ण जीवन पर पड़ने वाले सामाजिक अनुभवों के प्रभाव की व्याख्या करता है। इरिकसन ने अपने सिद्धान्त में मनोलैंगिक अवस्थाओं का वर्णन न करके मनोसामाजिक अवस्थाओं का वर्णन किया। इरिकसन का व्यक्तित्व सिद्धान्त फ्रायडवादी व्यक्तित्व विकास के सिद्धान्त की तुलना में अधिक व्यवस्थित एवं संगठित है। फ्रायड ने अपने सिद्धान्त में इदं को अधिक महत्व दिया जबकि इरिकसन ने अहं को। इरिकसन ने अपने सिद्धान्त में संस्कृति, समाज एवं अहं में होने वाले संघर्ष पर बल दिया। व्यक्तित्व के विकास को उन्होंने मनोसामाजिक अहं विकास की संज्ञा दी। उन्होंने फ्रायड के मनोलैंगिक विकास के सिद्धान्त के आधार पर व्यक्तित्व के विकास की आठ अवस्थाओं का वर्णन किया। इन आठ अवस्थाओं का विकास एक क्रम से होता है।

3.3.2. मनोसामाजिक विकास की अवस्थाएँ (Stages of Psycho-Social Development)

इरिकसन के अनुसार, मनोसामाजिक विकास की निम्नलिखित आठ अवस्थाएँ हैं। इन अवस्थाओं को विभिन्न आयु वर्ग में उत्पन्न होने वाले अन्तर्द्वन्द्वों के सारांश के रूप में निम्नलिखित तालिका में दर्शाया गया है—

तालिका— इरिकसन के अनुसार मनोसामाजिक विकास की अवस्थाएँ

क्रमांक (S.No.)	आयु (Age)	अन्तर्द्वन्द्व (Conflict)
1) शैशवावस्था	जन्म से 2 वर्ष	विश्वास बनाम अविश्वास (Trust versus Mistrust)
2) प्रारम्भिक बाल्यावस्था	3-4 वर्ष	स्वाधीनता बनाम शर्म (Autonomy versus Shame)
3) खेल अवस्था	4-5 वर्ष	पहल बनाम दोष (Initiative versus Guilt)
4) स्कूल अवस्था (उत्तर बाल्यावस्था)	6-12 वर्ष	परिश्रम बनाम हीनता (Industry versus Inferiority)
5) किशोरावस्था	13-18 वर्ष	अभिज्ञान बनाम भूमिका दुविधा (Identity versus Identity Confusion)
6) तरुण वयस्कावस्था	19-35 वर्ष	घनिष्ठता बनाम अकेलापन (Intimacy versus Isolation)
7) मध्य वयस्कावस्था	36-55 वर्ष	जननात्मकता बनाम ठहराव (Generativity versus Stagnation)
8) परिपक्वावस्था	55 वर्ष के पश्चात्	अहं सम्पूर्णता बनाम निराशा (Integrity versus Disappointment)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट हैं कि **इरिकसन के अनुसार**, "विकासात्मक यात्रा के प्रत्येक पड़ाव पर व्यक्ति को अनेकों संकेत, संक्रान्तियों एवं अन्तर्द्वन्द्व का सामना करना पड़ता है। अन्तर्द्वन्द्व का समाधान जिस प्रकार व्यक्ति करता है और वह अपने मनोसामाजिक परिवेश में जैसा अनुकूल करता है।"

- 1) **विश्वास बनाम अविश्वास (Trust versus Mistrust)**—इरिकसन के सिद्धान्त की यह प्रथम अवस्था जन्म से लेकर दो साल की होती है। जिन बच्चों को अपने माता-पिता तथा अन्य अभिभावकों से सतत उचित स्नेह, प्यार आदि मिलता है, उनमें विश्वास का भाव विकसित होता है। इसके विपरीत माता-पिता या अभिभावक द्वारा जिन बच्चों को रोते-बिलखते तथा चिल्लाते हुए छोड़ दिया जाता है, उनमें दूसरों के प्रति अविश्वास (Mistrust) विकसित हो जाता है जिससे उसे दूसरों के बारे में शक तथा दूसरों से अनावश्यक डर उत्पन्न हो जाता है। शिशु में स्वस्थ व्यक्तित्व का विकास इस तथ्य पर निर्भर करता है कि उसके जीवन में अविश्वास के अनुपात में विश्वास की मात्रा कितनी अधिक है। विश्वास एवं अविश्वास दोनों स्थिति होने पर शिशु के समक्ष संकट उत्पन्न हो जाता है। जब वह इन संकटों का समाधान कर लेता है तो शिशु में एक विशेष मनो-सामाजिक शक्ति विकसित होती है जिसे आशा कहते हैं।
- 2) **स्वायत्तता बनाम लज्जा एवं शंका (Autonomy versus Shame and Doubt)**—इरिकसन के सिद्धान्त की दूसरी अवस्था 3 वर्ष से 4 वर्ष तक होती है। जब बच्चे में अपने माता-पिता तथा देख-रेख करने वाले के प्रति विश्वास उत्पन्न हो जाता है तब बच्चे में यह भाव उत्पन्न होता है तथा वे स्वायत्तता एवं स्वतन्त्रता को महत्त्व देने लगते हैं। वे अपने से खाना खाना, कपड़े पहनना तथा शौच करना आदि कार्य करना पसन्द करने लगते हैं। इस अवस्था में वे आत्मनिर्भर होना चाहते हैं। ऐसे समय पर माता-पिता को अपने बच्चों को स्वतन्त्र रूप से कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। दूसरी तरफ कुछ कठोर स्वभाव के माता-पिता प्रायः बच्चों को साधारण कार्य करने पर भी डाँटते या पीटते हैं जिससे बच्चों को अपनी क्षमता पर शक होने लगता है जिससे वे अन्दर ही अन्दर लज्जा अनुभव करने लगते हैं। जब बालक स्वायत्तता बनाम लज्जा तथा शक के संकट का सफलतापूर्वक समाधान कर लेता है तब उसमें जो मनोसामाजिक शक्ति उत्पन्न होती है उसे इच्छा-शक्ति (Willpower) कहा जाता है। जिसके फलस्वरूप बच्चे शक तथा लज्जा की परिस्थिति में भी खुलकर आत्म-नियन्त्रण (Self Restraint) का प्रयोग करके व्यवहार कर पाते हैं।
- 3) **पहल बनाम दोष (Initiative versus Guilt)**—इरिकसन के सिद्धान्त की तीसरी अवस्था 4 वर्ष से 5 वर्ष की होती है। यह बालकों का प्राक्स्कूली वर्ष होता है तथा यह अवधि प्रारम्भिक बाल्यावस्था की होती है। जब बच्चों में स्वायत्तता का भाव विकसित हो जाता है तो वे अपने आस-पास के वातावरण में अन्वेषण करना प्रारम्भ कर देते हैं तथा नयी-नयी उत्सुकता दिखलाना प्रारम्भ कर देते हैं। इस अवस्था में बच्चे अनेक संज्ञानात्मक क्रिया-कलाप दिखलाते हैं जिसे पहल की संज्ञा दी गई है। माता-पिता को चाहिए कि वे इनके इस प्रयास की सराहना करें। यदि किसी कारण से माता-पिता बच्चों के इस पहल की आलोचना करते हैं या उन्हें दण्डित करते हैं तो इससे बच्चों में दोषभाव उत्पन्न हो जाता है। बच्चों में जब पहल का अनुपात इस दोषभाव के अनुपात से अधिक होता है, तो उनमें एक विशेष मनो सामाजिक गुण विकसित होता है, उसे उद्देश्य कहते हैं तथा इसके परिणामस्वरूप बालक में लक्ष्य-उन्मुखी व्यवहार करने की प्रेरणा उत्पन्न होती है।
- 4) **परिश्रम बनाम हीनता (Industry versus Inferiority)**—इरिकसन के सिद्धान्त की चौथी अवस्था 6 से 12 वर्ष तक होती है। इस अवधि को उत्तर-बाल्यावस्था भी कहा

जाता है। जब बालकों में पहले से विभिन्न प्रकार की नवीन अनुभूतियाँ प्राप्त हो जाती हैं तो वे अपनी ऊर्जा को नए ज्ञान अर्जित करने तथा बौद्धिक कौशल को सीखने में लगाना प्रारम्भ कर देते हैं। यहाँ वे अपनी प्राप्त सफलता एवं उसकी पहचान से अत्यधिक प्रोत्साहित भी होते हैं जिसे परिश्रम की संज्ञा दी गई है। बच्चे इस अवस्था में स्कूल में ही अधिकतर समय व्यतीत करते तथा ऊर्जा व्यय करते हैं, इसलिए शिक्षक तथा संगी-साथी का प्रभाव यहाँ महत्वपूर्ण होता है। यदि छात्र को अपने कार्य में असफलता प्राप्त होती है तो इससे बच्चों में हीनता का भाव विकसित होता है। इसी प्रकार से यदि बालक को तुच्छ कार्य पर सफलता प्राप्त होती है तो उसमें परिश्रम का भाव विकसित नहीं हो पाता है। प्रायः जो छात्र परिश्रम बनाम हीनता के संकट का सफलतापूर्वक समाधान कर लेते हैं, उनमें एक विशेष मनो परिणामस्वरूप छात्रों में यह विश्वास उत्पन्न होता है कि वे वातावरण के साथ ठीक ढंग से निपटने में सक्षम हैं।

- 5) **पहचान बनाम सम्भ्रान्ति (Identity versus Confusion)**—इरिकसन के सिद्धान्त की पाँचवी अवस्था 13 से 18 वर्ष की होती है जिसे किशोरावस्था कहते हैं। किशोरावस्था में यह जानने की प्राथमिकता बनी होती है कि वे कौन हैं? वे किसके लिए हैं? तथा वे अपने जीवन में किधर जा रहे हैं? इसे इरिकसन महोदय ने पहचान की संज्ञा दी है। किशोरों को विभिन्न नवीन भूमिकाएँ करनी होती हैं। यदि किसी कारण से किशोर भिन्न-भिन्न भूमिकाओं का अन्वेषण नहीं कर पाते हैं तथा अपने भविष्य का रास्ता निश्चित नहीं कर पाते हैं तो वे अपनी पहचान के बारे में सम्भ्रान्ति की स्थिति में होते हैं। जब किशोर पहचान बनाम सम्भ्रान्ति के संकट का सही समाधान कर लेते हैं, तो उनमें एक विशेष मनो सामाजिक गुण उत्पन्न होता है, जिसे कर्तव्यपरायणता की संज्ञा दी जाती है। इस सिद्धान्त के परिणामस्वरूप किशोरों में समाज के नियमों तथा आदर्शों के अनुरूप व्यवहार करने की उन्मुखता बढ़ जाती है।
- 6) **घनिष्ठता बनाम अलगाव (Intimacy versus Isolation)**—इरिकसन के सिद्धान्त की छठी अवस्था 19 वर्ष से 35 वर्ष की होती है। इसे आरम्भिक वयस्कावस्था कहते हैं। इस अवस्था में व्यक्ति दूसरों के साथ एक धनात्मक सम्बन्ध बनाता है। व्यक्ति में जब दूसरों के साथ घनिष्ठता का भाव विकसित होता है तो वह अपने आपको दूसरों के लिए समर्पित कर देता है। इस अवस्था का मुख्य संघर्ष घनिष्ठता बनाम अलगाव होता है जो लोग इस संघर्ष का सही-सही समाधान कर लेते हैं, उनमें एक विशेष मनोसामाजिक गुण विकसित होता है जिसे प्यार कहा जाता है। इसके विपरीत जो व्यक्ति घनिष्ठता बनाम अलगाव के संघर्ष का समाधान ठीक से नहीं कर पाते हैं, वे सांवेगिक रूप से अलग तथा दूसरों को प्यार देने एवं दूसरों से लेने में असमर्थ रहते हैं।
- 7) **जननात्मकता बनाम ठहराव (Generativity versus Stagnation)**—इरिकसन के सिद्धान्त की सातवीं अवस्था 36 वर्ष से 55 वर्ष की आयु की होती है। इस अवस्था में व्यक्ति को व्यक्ति की मध्यावस्था भी कहते हैं। इस अवस्था में व्यक्ति जननात्मकता का भाव अर्थात् अगली पीढ़ी के लिए कुछ धनात्मक चीजों को एकत्रित करना चाहते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जननात्मकता से तात्पर्य व्यक्ति द्वारा अगली पीढ़ी के लोगों के कल्याण तथा उस समाज जिसमें वे लोग रहेंगे को उन्नत बनाने की चिन्ता से होता है। जननात्मकता में उत्पादकता तथा सर्जनात्मकता भी सम्मिलित होती है। जैसे जो शिक्षक अपने छात्रों की उचित शिक्षा-दीक्षा के विषय में सचमुच चिन्तित रहते हैं वे जननात्मकता के उदाहरण हैं। जब व्यक्ति में जननात्मकता की चिन्ता उत्पन्न नहीं होती है तो उनमें स्थिरता उत्पन्न हो जाती है।

- 4) **कर्मकाण्ड अनुसरण (Following Rituals)**—प्रायः यह देखा गया है कि एक समाज अथवा समुदाय में कुछ ऐसे मानदण्ड निर्धारित एवं प्रचलित होते हैं जिनका उस समाज अथवा समुदाय के लोगों को पालन करना पड़ता है। इरिक्सन ने मानव विकास की अवस्थाओं में विभिन्न कार्यों के अनुमोदन को मान्यता दी जो उस समाज के लोगों द्वारा अनुमोदित होते हैं और इन्हें तीन R की संज्ञा दी जाती है अर्थात् कर्मकाण्ड (Rituals), कर्मकाण्डवाद (Ritualism), तथा कर्मकाण्डवादी (Ritualist)। मनोसामाजिक विकास की अवस्था में समाज के द्वारा स्वीकृत मानदण्ड मानव विकास की अवस्था को आगे ले जाने में सहायक होते हैं। इरिक्सन के अनुसार, "मनोसामाजिक विकास की प्रत्येक अवस्था में व्यक्ति को ऐसे कार्य करने पड़ते हैं जो उस समाज के वयस्क समुदाय द्वारा अनुमोदित होते हैं। इस प्रकार के व्यवहार को ही कर्मकाण्डवाद (Ritualism) कहा गया है। कई बार कर्मकाण्ड की बारम्बारता सामाजिक विकृति उत्पन्न करती है।"

इरिक्सन के मनोसामाजिक सिद्धान्त का समुचित मूल्यांकन करते हुए यह कहा जा सकता है कि यह सिद्धान्त जीवन में महत्वपूर्ण सामाजिक सांवेगिक कार्यों पर ध्यान देता है तथा उनकी व्याख्या एक विकासात्मक फ्रेमवर्क में करता है। कॉलेज छात्रों एवं प्रौढ़ किशोरों को समझने में उनके द्वारा प्रतिपादित पहचान के सम्प्रत्यय को शिक्षा मनोवैज्ञानिकों द्वारा अत्यधिक महत्त्व दिया गया है।

3.3.4. मनो-सामाजिक विकास सिद्धान्त के गुण (Merits of Psycho-Social Development Theory)

इस सिद्धान्त के निम्नलिखित गुण हैं—

- 1) इस सिद्धान्त में किशोरावस्था को बहुत महत्वपूर्ण माना गया है।
- 2) इस सिद्धान्त में व्यक्तित्व के विकास एवं संगठन की व्याख्या करने के लिए समाज एवं स्वयं व्यक्ति की भूमिकाओं पर समान रूप से बल दिया गया है।
- 3) इस सिद्धान्त में जन्म से लेकर मृत्यु तक की मनो-सामाजिक घटनाओं को व्यक्तित्व के विकास तथा समन्वय की व्याख्या में सम्मिलित किया गया है जो अपने आप में एक विशिष्टता है।
- 4) इस सिद्धान्त में बताया गया है कि एक अवस्था में असफल होने पर दूसरी अवस्था में भी असफलता ही होगी यह आवश्यक नहीं है। अतः यह सिद्धान्त आशावादी दृष्टिकोण अपनाता है।

3.3.5. मनो-सामाजिक विकास सिद्धान्त के दोष (Demerits of Psycho-Social Development Theory)

इस सिद्धान्त के दोष निम्नलिखित हैं।

- 1) आलोचकों के अनुसार इरिक्सन ने अपने सिद्धान्त में फ्रायड के व्यक्तित्व सिद्धान्त का सरलीकरण ही किया है और कुछ नहीं किया।
- 2) आलोचकों का मत है कि इरिक्सन ने अपने सिद्धान्त में आवश्यकता से अधिक आशावादी दृष्टिकोण अपनाया है जिसके कारण इनके सिद्धान्त में अव्यावहारिकता झलकती है। लेकिन इरिक्सन ने इस आलोचना का खण्डन करते हुए कहा है कि उन्होंने आशावादी दृष्टिकोण के साथ-साथ उस दृष्टिकोण को भी लिया है जिससे व्यक्ति में चिन्ता आदि उत्पन्न होती है।